श्री सहजानन्द शास्त्रमाला के संरक्षक

(१) श्रीमान् लाला महावीरप्रसाद जी जैन, बैंकर्स, सदर मेरठ

(२) श्रीमती फूलमाला जी, धर्मपत्नी श्री लाला महावीरप्रसाद जी जैन, बैंकर्स, सदर मेरठ।

श्री सहजानन्द शास्त्रमाला के प्रवर्तक महानुभावों की नामावली :—

(१) श्री भंवरीलाल जी जैन पाण्ड्या, झूमरीतिलैया
(२) ,, ला० कृष्णचन्द जी जैन रईस, देहरादून
(३) ,, सेठ जगन्नाथजी जैन पाण्डया, झूमरीतिलैया
(४) ,, श्रीमती सोवती देवी जी जैन, गिरिडीह
(५) श्री ला० मित्रसैन नाहरसिंह जी जैन, मुजफ्फरनगर
(६) ,, ला० प्रेमचन्द ओमप्रकाश जी जैन, प्रेमपुरी, मेरठ
(७) ,, ला० सलेखचन्द लालचन्द जी जैन, मुजफ्फरनगर
(८) ,, ला० दीपचन्द जी जैन रईस, देहरादून
(९) ,, ला० वारूमल प्रेमचन्द जी जैन, मसूरी
(१०) ,, ला० बाबूराम मुरारीलाल जी जैन, ज्वालापुर
(११) ,, ला० केवलराम उग्रसैन जी जैन, जगाधरी
(१२ ,, सेठ गैदामल दगड्डू शाह जी जैन, सनावद
(१३) ,, ला० मुकुन्दलाल गुलशनराय जी, नई मंडी, मुजफ्फरनगर
(१४) ,, श्रीमती धर्मपत्नी बा० कैलाशचन्द जी जैन, देहरादून
(१५) ,, श्रीमान् ला० जयकुमार वीरसैन जी जैन, सदर मेरठ
(१६) ,, मंत्री जैन समाज, खण्डवा
(१७) ,, ला० बाबूराम अकलंकप्रसाद जी जैन, तिस्सा
(१८) ,, बा० विशालचन्द जी जैन, आ० मजि०, सहारनपुर
(१९) ,, बा० हरीचन्द जी ज्योतिप्रसाद जी जैन ओवरसियर, इटावा
(२०) श्रीमती प्रेम देवी शाह सुपुत्री बा० फतेलाल जी जैन संघी, जयपुर

(२१) श्रीमती धर्मपत्नी सेठ कन्हैयालाल जी जैन, जियागंज
(२२) ,, मंत्राणी, जैन महिला समाज, गया
(२३) श्रीमान् सेठ सागरमल जी पाण्ड्या, गिरिडीह
(२४) ,, बा० गिरनारीलाल चिरंजीलाल जी, गिरिडीह
(२५) ,, बा० राधेलाल कालूराम जी मोदी, गिरिडीह
(२६) ,, सेठ फूलचन्द बैजनाथ जी जैन, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर
(२७) सेठ छदामीलाल जी जैन, फिरोजाबाद
(२८) ,, ला० सुनवीरसिंह हेमचन्द जी सर्राफ, बड़ौत
(२९) ,, सेठ गजानन्द गुलाबचन्द जी जैन, गया
(३०) ,, बा० जीतमल शान्तिकुमार जी छाबड़ा, झूमरीतिलैया
* (३१) ,, सेठ शीतलप्रसाद जी जैन, सदर मेरठ
* (३२) ,, सेठ मोहनलाल ताराचन्द जी जैन बड़जात्या, जयपुर
* (३३) ,, बा० दयाराम जी जैन R. S. D. O., सदर मेरठ
* (३४) ,, ला० मुन्नालाल यादवराय जी जैन, सदर मेरठ
× (३५) ,, ला० जिनेश्वरप्रसाद अभिनन्दनकुमार जी जैन, सहारनपुर
* (३६) ,, ला० नेमिचन्द जी जैन, रुड़की प्रेस, रुड़की
× (३७) ,, ला० जिनेश्वरलाल श्रीपाल जी जैन, शिमला
× (३८) ,, ला० बनवारीलाल निरंजनलाल जी जैन, शिमला
* (३९) श्रीमती शीलकुमारी जी, धर्मपत्नी, बाबू इन्द्रजीत जी वकील, बिरहन रोड, कानपुर।

नोट:— जिन नामोंके पहले * ऐसा चिन्ह लगा है उन महानुभावों की स्वीकृत सदस्यताके कुछ रुपये आ गये हैं बाकी आने हैं तथा जिनके नामके पहले × ऐसा चिन्ह लगा है उनके रुपये अभी नहीं आये, आने हैं। श्रीमती बल्लोबाई जी ध० प० सि० रतनचन्द जी जैन जबलपुरने संरक्षक सदस्यता स्वीकार की है।

—:o * o:—

आत्मकीर्तन

अध्यात्मयोगी न्यायतीर्थ पूज्य श्री मनोहर जी वर्णी
"श्रीमत्सहजानन्द" महाराज द्वारा विरचित

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम । ज्ञाता द्रष्टा आतमराम ।।टेक।।

(१)

मैं वह हूँ जो हैं भगवान्, जो मैं हूँ वह हैं भगवान् ।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहं राग वितान ।।

(२)

मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित-शक्ति सुख-ज्ञान-निधान ।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ।।

(३)

सुख-दुख दाता कोइ न आन, मोह राग रुष दुख की खान ।
निजको निज परको पर जान, फिर दुखका नहिं लेश निदान ।।

(४)

जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम ।
राग त्यागि पहुँचूं निजधाम, आकुलताका फिर क्या काम ।।

(५)

होता स्वयं जगत् परिणाम, मैं जगका करता क्या काम ।
दूर हटो परकृत परिणाम, "सहजानन्द" रहूँ अभिराम ।।

(अहिंसा धर्मकी जय)

प्रवचनसार-प्रवचन पंचम भाग

वक्ताः—पूज्य श्री मनोहरजी वर्णी 'सहजानन्द' महाराज

दव्वट्ठिएण सव्वं तं दव्वं पज्जयट्ठिएण पुणो ।
हवदि य अण्णमणण्णं तक्कालं तम्मयत्तादो ॥ ११४ ॥

जगत्के पदार्थों को जानने के लिए इतना तो जानना आवश्यक है कि संसारमें समस्त पदार्थ कितने हैं ? तब तो कोई बात उनके सम्बन्धमें कही जा सकती है । समस्त पदार्थ कितने हैं—जानने के लिए यह समझना पड़ेगा कि एक पदार्थ कितना होता है ? एक पदार्थ इतना होता है जितना कि वह त्रिकाल अखण्ड रहे अर्थात् जिसका कभी टुकड़ा न हो सके, उतना एक पदार्थ होता है । जगत् में हमें जो कुछ दीखता है वह एक पदार्थ नहीं; वह अनेक पदार्थों का कुञ्ज था सो वह बिखर गया, इसी को लोग टुकड़ा होना कहते हैं । जैसे हम एक जीव हैं; क्यों एक है ? इस लिए की हमारे दो टुकड़े नहीं हो सकते । इसी प्रकार प्रत्येक जीवों की बात है । दिखने वाले पुद्गलोंमें जो एक एक अविभागी परमाणु हैं वे एक एक पदार्थ हैं । जो कुछ दिखाई देता उसे एक व्यवहारमें कह देते है—वह एक नहीं हैं, किन्तु अनेकों का समूह है । तभी उसके कई हिस्से हो जाते हैं ।

जैसे कोई दस चीजों का समूह है । वह बिखर कर ६ और ४ की संख्यामें बट जाय तो यह चीज का टुकड़ा होना नहीं कहलाता किन्तु अनेक चीजें थीं वे बिखर गईं । अनेकों को एक मानना भ्रम है; स्कन्धों को एक पदार्थ माना मिथ्यात्व है । स्कन्ध परमाणु सारी दुनियां में भरे पड़े हैं । संसार में अगर ये दृश्य पदार्थ एक चीज होती तो उसके टुकड़े नहीं हो सकते थे । यह दृश्यमान सब अनन्त परमाणुओं का कुञ्ज है । जिसे हम देखते है वह अनन्त परमाणुओं से बना हुआ है । जैसे मन भर गेहूँ कि बोरी है, वह एक चीज नहीं अनेकों गेहुओं की पुञ्ज है । गेहूँ एक एक है वह तो पूरी है । वस्तुतः उसका गेहूँ का दाना एक चीज नहीं है, क्योंकि वह भी अनन्त परमाणुओं का एक पिण्ड है । अगर किसी के टुकड़े हुए तो वह एक नहीं था; ऐसे देखो तो एक एक परमाणुका नाम द्रव्य है ।

अनेकों के समूहमें एकका भ्रम करके इसीमें जीव ममता करता है। बिखरने वाला बिखर गया, आत्माकी और शरीर की दूकान अलग अलग है, इन दोनों के कार्य भी अलग अलग हैं, दोनों में पार्टिशन भी नहीं है। आत्मा का व्यापार आत्मामें और शरीर का व्यापार शरीर में चलता है। शरीर तो बेवकूफ बनता नहीं, क्योंकि वह अनजान है, पर आत्मा बनती है क्योंकि वह जानती हुई भी मोह जालमें फंसती है। शरीर का कार्य अनन्त परमाणुओं के रूप, रस, गन्ध, स्पर्श गुणके परिणमन से चलता है; परन्तु आत्माका कार्य जीवमें चलता है तो जो ऐसा जानता है वह अच्छा नहीं है। ऐसे तो बेवकूफ जीवोंसे तो अजीव अच्छा। अजीव पदार्थ कभी आकुलता नहीं करता इसलिए यह अच्छा है, न कि आकुलता करने वाला। अपने अपने स्वभावके अनुसार पदार्थ का एक एक परमाणु द्रव्य है। हम जिन भगवान् की पूजन करते हैं उनके गुणों को तो देखते नहीं हैं, हमें उनके गुणों को देखना चाहिए। हम रागतानमें मस्त रहते हैं। दूसरों की कला देखते हैं, नाचना देखते तथा हाव भावों को देखते है, उसकी आवाज की ओर ध्यान लगाते हैं—यह तो अज्ञानता है। मन्दिरमें हम अपना ध्यान भगवान् के गुणों की ओर न लगा कर यहां वहां की ऊपरी आडम्बरों की ओर लगाते हैं, यही सबसे बड़ी अविनय है।

घरमें रहते तो यही सोचा करते कि यह अच्छा है, यह बुरा है, यह हमारा है, यह परका है, उससे ममत्व लगाये रहते हैं, यह भूल है। इस प्रकार विचारते ममत्व भावनाएं करते रहते जिन्दगी भर यही गाड़ी चलती रहती है, पर एक बार भी ख्याल नहीं आता है कि यह सब जाल झंझट, मिथ्या है। इस संसारमें अपना शरीर तक अपना नहीं तो फिर दूसरा कौन अपना है? तेरहवें गुणस्थानमें अनन्त वीर्य, अनन्त सुखों की प्राप्ति होती है वैसी प्राप्ति हम भी कर सकते हैं, पर उस चीज को पालने की कोशिश नहीं करते हैं, करें कहांसे? क्योंकि बुद्धि तो ममत्व परिणाम में रंगी हुई है। भैया! बाह्य पदार्थोंकी प्राप्ति की बात तो बहुत मुश्किल है करना, पर यह तो करना कोई कठिन नहीं जो हमारे भगवान् महावीर स्वामी या श्री ऋषभदेव कर गये। जो वाणी उनके शब्द परम्परासे चले आये हुए हैं। उस पर विश्वास करना तथा

उस रास्ते पर चलना भी साक्षात् भगवान् का स्वरूप पाने के लाभसे कम नहीं है। फिर भी देखने में आता है कि प्राय: किसी को भी उनके ऊपर उनके वचनों पर रुचि नहीं है। किसी को विश्वास कम है, जो कुछ है तो उसमें भी आदर नहीं है। सिवा मन कषाय भावके और कुछ नहीं है। अगर कोई भजन अच्छे रगासे गा रहा है तो कहेंगे एक और भजन हो जाने दो। एक आदमी भगवान्के रागमें मस्त होकर राग से अगर भजन गाता है तो उसे चार आदमी कैसी शान्तता से सुनते हैं? इस पर दृष्टि हो जाती तो क्या इन लोगों को भगवान्के प्रति दृष्टि होगी। पर इतना होने पर भी उनसे कहेंगे तो कुछ बुरा भी होगा क्योंकि जो घर पर बैठे गुलछर्रे उड़ा रहे हैं, राग रंगरेलियों में मस्त हैं, उनसे अच्छे तो ये हैं। उनके अन्दर भी ऐसे विचार आवेंगे कि उनसे हम कुछ अच्छे तो हैं जो थोड़े समयके लिए भगवान् की स्तुतिमें अपना भाग दे रहे हैं। पर फिर भी सोचेंगे कि हमारे स्वरमें ऐसी आवाज है कि जिस प्रकार २०–२५ आदमियों के स्वरोंमें, तो सब एक साथ एक ध्वनि से बोलें तथा जितनी हमारे बोलने की गति है उसी स्वरसे बोला जा रहा है तो वह सुन्दर प्रतीत होगा। इस प्रकारकी पार्टीमें हमारा ध्यान दूसरों के प्रति बहुत ज्यादा रहता है। उस समय हम भगवान्के प्रति से दृष्टि हटा कर वहाँ पर ध्यानको ले जाते हैं यह भूल है तथा इसी कारण धर्म व्यवहारमें भी आत्मा को शान्ति नहीं मिलती है।

इन पदार्थोंका स्वरूप देखो, सम्यग्दृष्टि कौन है, जो एक पदार्थ को एक देखे वह सम्यग्दृष्टि है। क्योंकि अनेकों को एक देखने से ममता बढ़ती है। शरीरके एक परमाणु के स्थानपर अनन्त परमाणु भी हैं, फिर भी प्रत्येक के स्वरूप भिन्न-भिन्न हैं। जिस जीव के अन्दर स्वतन्त्रता प्रीति बैठ जाय उसे ही शान्ति मिलेगी। ज्ञान होना ही एक शान्ति का मुख्य अंग है। देखने में ज्ञानकी पूजा छोटी है पर उसका महत्व बहुत बड़ा है। तुम तप करो, अनशन गर्मी में पहाड़ ऊपर तपस्या महीना भर करो, पर जब तक ज्ञान नहीं हो एकाग्रचित्त को शान्ति नहीं मिल सकती तब तक जप तप सब व्यर्थ हैं। अगर अज्ञानी को ऐसा तप हो तो उसे मोक्ष तक बढ़ाने का कारण है।

शरीर को देखकर यह मद करना कि मैं रूपवान् हूँ, मेरा शरीर मोटा है, पतला है, मैं बलवान् हूँ, किसी से भी नहीं डरूंगा, मैं बूढ़ा हूँ, इस प्रकारके विचार करना मिथ्या है। यह शरीर तो परमाणुओं से मिल कर बना है तथा बिखर जाने वाला है माया वाला है, फिर ऐसे शरीर से ममत्व बुद्धि क्यों करता है ? अहा संसारमें मोहजाल का ही दुःख है। मान लीजिए तुम्हारे यहां जो पैदा है अगर वह जीव नहीं आता उसकी जगह दूसरा जीव आता तो तुम्हारी उससे ममता तो नहीं थी फिर क्यों उस लड़के से इतनी ममत्व बुद्धि रखते हो ? इसी प्रकार इस शरीर का भी हिसाब है। इस पुत्र शरीरसे ममता होना एकको एक जानना नहीं है। जो इस शरीरके परमाणु हैं वह अनन्त मिल कर एक रूप बने हैं। उसे हम अपना शरीर है यह मानते हैं पर वह तो भिन्न है। इस प्रकारके भ्रममें जीव पड़ा है।

एक कितना है ? यह देखो जब दीपक की ज्योति होती है उससे वहां का सारा अन्धेरा नष्ट हो जाता है क्योंकि उसकी किरणें सारे प्रदेशमें फैल जाती हैं और अन्धकार पर अपना कब्जा जमा लेती हैं। उनमें इतनी शक्ति है; पर अपने तले अन्धेरा ही रहता है। यही परोपकारका बड़ा अच्छा नमूना पेश है। देखो यहां पर पुत्रसे बापका, स्त्रीसे पुरुषका, मातासे बच्चेका, घर वालों का कुटुम्ब परिवार से मित्रों का, दोस्तोंसे रिस्तेदारोंसे अपना कोई सम्बन्ध नहीं परिचय नहीं है। इतना होने पर फिर उससे हमें क्यों ममत्व होता है ? उसमें कौनसा तत्व है ? इस ओर भले ही दूसरे की दृष्टि न जाय पर हमें विचार जरूर करना है सोचना है। कभी दृष्टि भी ठीक हो जायगी व आचरण भी ठीक हो जायगा। यदि अज्ञान भावमें रहकर धर्मके नाम पर कुछ भी करोगे तो न कुछके समान है। तुम बड़े बड़े धर्म कर डालो पर ये क्रोध, मान, माया, लोभ जो सताने वाले हैं उनको नहीं छोड़ा तो सब व्यर्थ है। अगर तुम्हारे पर धन नहीं है, दरिद्रता है, गरीबी है तुम दुःखी हो, किसी भी संकटमें फंसे हो, अगर तुम्हारे पास क्रोध मान, माया लोभ नहीं तो अपरिमित सुख शान्ति को पालोगे। जहां पर ये सब हैं और पैसा भी हो सब बेकार है क्योंकि ये चारों ही सताने वाले हैं अतः इनको छोड़ना जरूरी है। यहां पर बैठे हैं तो अकेसे

ही हैं, घर पर हैं तो अकेले ही हैं, मित्र मण्डली में बैठे हैं तो भी अकेले हैं। कोई किसीका नहीं है, कोई भी किसी के साथ नहीं जाता है। यह सब मानना मिथ्या है कि यह मेरा है, मैं इसका हूँ। इस तरहसे शोक करना भ्रम है यह लड़का मेरा है उसके दुःखी होनेपर दुःखी सुखी होने सुखी होना। जब कि शरीर और आत्मा (जीव) का कार्य एकसा नहीं है। शरीर का अलग तथा जीवका अलग है तो फिर इस संसार (जगत) को क्या पूछना? वह भी एक चीज नहीं हो सकती है। श्री कवि भूधरदास जी ने कहा भी है:—

जहाँ देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।

जब कि देह ही अपनी नहीं है तो फिर दूसरों का क्या विश्वास करना है कि यह मेरे हैं। इसका अर्थ यह नहीं समझ लेना कि जहां याने मरने पर भर घर में शरीर अपना नहीं रहता है वहां अपना कोई नहीं है और घरमें तो सब कोई हैं (हंसी) यह तो व्यावहारिकता है। कहने का मतलब यह है कि देह और शरीर का व्यापार अलग २ है, अतः आत्मा और शरीर का कोई सम्बन्ध नहीं है। इस लिए परपदार्थ तो प्रगट पर हैं। कुछ भी अपना नहीं है। हमें पर मेरा कुछ है ऐसा मानना भी नहीं चाहिए क्योंकि हमें तो आत्मा से सम्बन्ध जोड़ना है जिससे कल्याण हो। पुत्र पुत्रादिक तो क्षणिक दिखने के ही हैं, यह पानी कैसे बुदबुदा है। अतः परपदार्थसे मोह मिथ्या है। दर्शन-मार्गणा, लेश्या मार्गणा, कषायमार्गणा, ज्ञानमार्गणा आदि तो आत्माके कार्य हैं तथा शरीरका दुबलापन जीर्ण, जवान रूप रंगमें गोरा काला, चमकदार, कान्ति वाला दिखनेमें मोटापन ये सब शरीर के कार्य हैं। इन सबका शरीर अलग अलग है। दोनों का किसी भी से सम्बन्ध नहीं है। अगर हमें भूख लगी, ठंडी लगी, प्यास लगी, यह सब पुत्र अपना, घर हमारा, कपड़े हमारे, इस तरह की समस्त ममता शरीर से ही है तथा हमें इज्जत मिली, मान मिला आदि भी शरीर की ममतासे है। शरीर में चैतन्यपने का स्वरूप लिये जो आत्मा विराजमान है उसको कौन जानता? अपनी परख न होनेसे ही तो ये भव होते हैं कि मेरा अपमान हो गया है, किसने किया है, क्यों किया है? शरीर के बगैर संसारमें रुलाने का कार्य नहीं चलता है। संयम भी शरीरके

रहने पर ही होता है, वगैर शरीरके नहीं हो सकता हैं परन्तु आत्मामें दृष्टि लगाने से ही संयम होगा। जब शरीर से दुःखकारी ऐसी प्रवृत्ति होती है तो फिर क्यों शरीर से ममता रखता है। परपदार्थ भिन्न हैं, उनसे हमारा कोई सम्पर्क नहीं है—मनमें यह विचार आये और फिर परपदार्थ से विविक्त निज आत्मतत्त्वमें रम जाये कि इस शरीरसे छुटकारा मिल जावे, फिर कभी भी इस शरीरमें न आना पड़े—ऐसा ज्ञान उत्पन्न करना चाहिए। शरीरमें शरीर परिणमता है, यह शरीर अनन्त परमाणुओं वाला है। मगर तुम इस तरह के विचार अपने मनमें धारण करके अन्तरचर्यामें ही चलाते रहोगे तो तुम भी सिद्ध भगवान् हो जावोगे। शरीर जुदा है, यह तब समझमें आवेगा जब प्रत्येक पदार्थ का स्वरूप जुदा-जुदा समझोगे। जब इस प्रकार की दृष्टि हो जावेगी एक एक चीज एक एक परमाणु है उस दिन शरीर जुदा और जीव जुदा है यह अच्छी तरहसे समझ जाओगे। जब शरीरके एक एक परमाणुको भिन्न माने रहोगे तब यह भी रहेगा उसकी निगाहमें कि शरीर बिखर गया। जिस उपयोग में स्वतन्त्र परमाणु दीखें उस उपयोगमें शरीर बिखर गया। जिसके उपयोग, निगाहमें सही एक एक हैं उसको किससे ममता हो किससे प्रेम करे वह ? इस बार बार के अभ्याससे भीतर की ज्योति मिलेगी।

जो एक एक अखण्ड है यह एक एक पदार्थ एक एक चीज है। अनन्तानन्त जीव अनन्तानन्त पुद्गल, एक आकाशद्रव्य, एक धर्मद्रव्य, एक अधर्म द्रव्य, असंख्यात काल द्रव्य पदार्थ हैं। ये पदार्थ स्वतःसिद्ध हैं, किसी ने ही बनाये नहीं हैं अनादिसे चले आये हैं। इनकी खास विशेषता हरदम परिणमन शील है। इस कारणसे प्रत्येक पदार्थ की कोई न कोई दशा है। जीव की कोई न कोई अवस्था रहती है, वह प्रतिसमय जुदी जुदी है, उसमें रहने वाला जीवत्व एक है। धर्म, अधर्म, आकाश, काल सब की अवस्था भी जरूर बदलती है। जो पहली अवस्था है वह नहीं रहती, दूसरे परिणति में उसका परिणमन हो गया है होता रहता है। जो अवस्था पहले समय थी वह दूसरे समय नहीं हो सकती है। हां, शुद्धद्रव्यमें अवस्था सदृश्य समान होती है विसदृश्य नहीं हो सकती है। जैसे स्कन्धों की दशा जैसे आज नवीन संसार की विसदृशा

अवस्था हो जाय। क्रोध, मान, माया, लोभ हो गया। भगवान् की सदृश्य अवस्था अभी है, वह तीनो लोक काल जो पहले समयमें है वह दूसरे तथा तीसरे समय भी चौथे समय भी रहेगी लेकिन काल की जो अवस्था है उसमें परिवर्तन होता जाता है। जैसे आज जो अवस्था है वह एक मीनिट पीछे नहीं रह सकती, उसमें परिवर्तन आ जावेगा।

दोनों का एक साथ रहना और भगवान् का भी परिणमन होना तो यह कहा नहीं जा सकता—कैसा परिणमन होता है ? जो पहले समय का परिणमन वही दूसरे समयमें दूसरा हो जावेगा तो यहां तक इतनी बात जानना कि प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है और परिणमन करने वाला उसकास्वरूप है। प्रति समय एक सेकण्ड में असंख्यात समय होते हैं उन सबका परिणमन होता रहता है। जैसे एक बिजली का बल्ब लगातार एक घन्टे से जल रहा है तो मान लो जब वह १० बजे जला तो उसने वही प्रकाश किया, ७ बजकर एक मिनिट पर वही प्रकाश, इसी तरह चाहे दस मिनिट बाद भी उसे देखो तो प्रकाश ज्यों का त्यों रहेगा पर उसकी अवस्थामें परिणमन अवश्य होता जाता है। अगर इन दोनों अवस्थामें तटस्थता आ जाय तो काम भी बन्द पड़ जाय। इसी प्रकार एक गोला है लोहे का, तुम उसे हाथमें ले लो पर दूसरे देखने वाला यही सोचेगा कि तुमने क्या किया, पर परोक्षमें देखो सोचो तो प्रत्येक समय अलग २ अवस्था होती रहती है। जैसे उसने आठ बजे गोला लिया पर आठ बजे जो ताकत उसने लगाई है उसके बाद आठ बजकर १ मिनिट पर उससे ज्यादा ताकत लगेगी। अतः यह स्वयं सिद्ध है कि प्रत्येक पदार्थ परिणमन शील है। उसी तरह से तुम अपने मकान को ले लीजिए जिसे तुमने आज बनाया है। उसको ५ साल बाद देखोगे तो वह तुम्हें दिखाई नहीं देगा कि उसमें क्या परिवर्तन हुआ है पर उसकी अवस्था अवश्य ही बदलती रहती है। यहां तक यह बात जान ली कि प्रत्येक पदार्थ परिणमन शील है। जो पदार्थ आज दिखाई देता है वही कल भी दिखेगा पर उसकी अवस्थामें अन्तर अवश्य आ जावेगा। इसी तरह इस शरीर की हालत है। जहां पहले हमारे परिणाम थे वे इस समयमें नहीं हैं। परिणामों में भी परिवर्तन हो

जाता है। यह परिणमन अनादिसे अनन्त समय तक चलता रहेगा और चला आ रहा है। जिन चीजों की सिफ अवस्थामे परिणमन चलता रहेगा कि वह चीज ज्यों की त्यों रहेगी। इससे यह सिद्ध है कि प्रत्येक पदार्थ परिणमन शील है।

जिसके क्रोध, मान, माया, लोभ जिसके परिणाम ऐसे हो रहे वह हमेशा दुःखी रहेगा, कभी भी उसकी उन्नति नहीं हो सकती है। उदाहरण कि आम एक है उसकी भिन्न भिन्न अवस्थाएं बदल जाती हैं। पहले वह छोटा था फिर बड़ा हुआ आखिर फिर पक गया नीचे गिरा पर कौन गिरा? आम वही जो पहले था। उसकी अवस्थाओ मे परिवर्तन हो गया है। इसी तरह पदार्थमें दशा एक हर समय बदलती रहती है। मगर पदार्थ का स्वरूप सत्य ही नजर आयेगा। क्योंकि दृष्टिसे अलग अलग नजर आयेंगे। पदार्थ को देखने के दो तरीके है। जैसे यहां पर २० आदमी बैठे हैं ऐसे समयमें एक आदमी आता है उसे किसी खास व्यक्ति से कार्य है तो उसकी निगाह उसी आदमी पर है तथा उन उन्नीस आदमियों पर नहीं है। अतः यह भी है कि कोई उनमें से एक सज्जन है तो उसकी दृष्टि शुद्ध है उसीकी दृष्टि भगवान् के स्वरूपको समझने की ओर जावेगी। उन्हीं आदमीमें एक आदमियों ऐसा है जिसको सबसे मतलब है वह सबको एकसा देखेगा। पर वह पहले वाला सिर्फ जिस आदमी से कार्य है उसे ही देखेगा, अन्य आदमियों से उसे कोई मतलब नहीं है। पहला पर्याय की दृष्टि से देखेगा क्योंकि उसे एकसे कार्य है तथा दूसरा द्रव्यदृष्टि से देखेगा क्योंकि उसे सबसे कार्य है तथा समान दृष्टि भी उसकी है अतः किसी भी प्रकारसे उसमें बाधा नहीं है। ये दोनो अवस्थाएं ही पर्याय हैं। द्रव्यदृष्टि से सामान्य विशेषसे पर्याय ही है। जीवमें जो विशेष पर्याय हुई वह विशेषमें जिसमें जो चीजें उत्पन्न हुई वे सामान्यमें नहीं हुई। जगत्में हमने विशेषको जाना पर सामान्यको नहीं जाना। जब तक सामान्य को नहीं जानेंगे तब तक मिथ्यात ही रहेगा। विशेष है, पर सामान्य की खबर ही नहीं है। अनादि अनन्तद्रव्य क्या होता है? जगत्के पदार्थ दुनिया को जानने में आये पर विशेषमें उस समान्यकी जरूरत थी जिसकी

कुछ खबर ही नहीं रही। वस्तुका असली रूप देखनेके लिए सामान्यकी जरूरत पहले है बादमें विशेषकी। जैसे आप हैं एक, पर आपकी अवस्थाऐं हमेशा ही बदलती रहेंगी। हम अनादि कालसे एकसे रहे हैं रहेंगे और रहते जावेंगे, पर अवस्थाऐं ही बदलती रहती है। प्रतिसमय हमारेमें क्रोध, मान, माया, लोभ की परिणति तो रही है। यह विशेषका ही कारण है जो हम बाहरी आडम्बर को ही मान कर चल रहे हैं। पदार्थ स्वरूपके विशेष मानकर अशान्ति मानता है व सामान्य मान कर शान्ति मानता है। जितने बाहरी पदार्थ हैं सब दुःखके देने वाले हैं, इनको मोही अपना मानता है। सामान्य विशेष ये दो दृष्टि पदार्थ देखनेकी हैं जैसे किसी भी चीजको बाईं आंख बन्द कर दाहिनी आंखसे देखिये तो वही फिर दोनों खोलकर देखिये फिर दाहिनी मीचकर देखिये तो वही बाहरी रूप दिखेगा। लेकिन जब आंखें दोनों बन्द करके देखोगे तो असली रूप दिखाई देगा। यही स्वभाव है। पदार्थोंके जाननेके चार उपाय हैं सामान्य, विशेष, सामान्यविशेष, अविशेषसामान्य। सामान्यसे पदार्थ नित्यस्वरूप नजर आवेगा और विशेषसे बाहरी रूप नजर आवेगा। विशेषसे अभेद ध्रुव न दिखेगा। विशेष परिणाम, परिणमन भेदकी अपेक्षा है। सामान्यमें विशेष लगाओ तो परिणाममें विकलता आजावेगी। अगर दोनों नयोंको बन्द करके देखोगे तो निर्विकल्प क्षोभरहित अवस्था रहेगी ये जानने की तरकीब है पदार्थोंको।

मनमें ऐसा उत्साह लाना चाहिए जो होगा, होगा देखा जावेगा किसी की कुछ भी चिन्ता नहीं है किसीके लिए क्यों रंज करना किसीपर क्यों मोह करना। यह सब स्वार्थपरताके कारण ही दिखाई देते हैं। मैं एक चिदानन्द आत्मस्वरूपका ही ध्यान करूंगा ऐसा विचार करें। यह सब ज्ञानका ही बल है जो हम प्रत्येक पदार्थको जान सकते हैं अज्ञानीको बोध कहाँ से हो सकता है। जैसे मुनि जंगलमें जाकर कठिनसे कठिन तप करते यह सब कर्मों का नाश करनेके लिए। यदि अन्दर उनको ज्ञान नही तो कैसे करें फिर सब व्यर्थ जावे जैसा तुम परिणाम करोगे वैसा ही तुम अपने आप पाओगे। आप भी चतुर आदमी हैं जिसपर आपका बस नहीं चलता उसे आप पानेकी

कोशिश क्यों करते हैं उसीमें अपनी चिन्ताको क्यों लगा देते हैं। जैसे कि धन कमानेमें तुम्हारा वस नहीं है यह तो भ्रम है कि तुम समझते हो कि मैं कमाता हूँ ज्यादा कमा लूं धनवान् बन जाऊं और दूसरेसे ज्यादा कमालूं इस प्रकारकी प्रवृत्ति है यह भ्रममूलक है। पूर्व भवमें जो बात उद्देश्यकी थी वही इसी समय प्रगटमें काम आई अतः उस उदय के अनुसार यह व्रत है ज्ञानावरणने जानने नहीं दिया। जानकारी बढ़ानेमें हितकी बातमे जानकारी लगादेना, जिसपर वस चले वह काम करो तो पूरा पड़ जावेगा। नहीं तो समय और व्यर्थ जावेगा कोई समय ऐसा आवेगा कि बड़े बड़े भी मृत्युमुखमें पड़ेंगे किसी समय। इसको भी किसी समय मृत्युका ग्रास बनना पड़ेगा। उस आवागमनमें सुखका अनुभव करना आकिञ्चन्यभावसे गुजर करना। आराम करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है जैसे रामचन्द्र जी ने जंगलमें बेर खाकर दिन बिताये इसी लिए अयोध्या वाले उन्हें पूजते। एक राजकुमार होकर आज्ञाका यों पालन किया तथा कठिन दुःखोंको भी सुख मानकर प्रतिज्ञा पूरी की पिताकी आज्ञाका पालन किया। अगर खुदमें आत्माका स्वरूप रहा तो मनुष्य जीवन सफल हो सकता है। सारी वस्तुएं सामन्यविशेषात्मक है सामान्य द्रव्यार्थिक दृष्टिसे विशेष पर्यायार्थिक दृष्टिसे ज्ञात होता। दोनोंका काम बन्द कर दिया तो अपने अपनेमें नामरहित चैतन्य स्वरूप दिखेगा। उसीको देखनेमें आनन्द है।

रुड़की की एक बात है कि मन्दिरमें एक अजैन स्त्री मेरे पास आई और अपनी दुःखोंकी गाथा सुनाने लगी कि मैं कुछ नहीं कर सकती हूं क्योंकि मैं स्त्री हूँ मैं उन्नति नहीं कर सकती धर्म करनेमें शर्म आती है चार आदमी नाम रखते हैं। तब मैंने कहा कि तुम स्त्री हो इस प्रकारका तुम्हें भ्रम है कौन कहता है तुम स्त्री हो, तुम स्त्री नहीं हो। उसने कहा यह कैसे समझा जाय कि मैं स्त्री नहीं हूं मैंने कहा शरीर जीव दो न्यारे न्यारे हैं फिर तुम शरीरमें अहं बुद्धि लगा कर यह कहती हो कि मैं स्त्री हूं। तुम तो जीवमें अहं भाव रक्खो तो फिर कभी भी यह नहीं कहोगी कि मैं स्त्री हूं। जीव कभी न पुरुष होता न स्त्री होता है, क्यों कि आज कलके जमाने मे भी स्त्रीवेदी पुरुष हो सकता है और पुरुषवेदी स्त्री हो सकता है। तो फिर क्यों ऐसी तुम धारणा

करती हो कि ये पुरुष हैं मैं स्त्री हूँ। यहां पर इतने आदमी बैठे हैं उनमें न जाने कौन पुरुष है कौन स्त्री है तथा इतनी स्त्रियोंमें जाने कौन स्त्री है और कौन पुरुष है यह सुनकर वह स्त्री खुश हुई और बोली आपने ठीक कहा मुझे बहुत अच्छा लगा है। अगर इसी तरहसे प्रत्येक प्राणी अपनी अपनी बातोंका स्पष्टीकरण करके समझने लगे तो इस संसारसंकटसे हमेशाके लिए छुटकारा पा जावे।

इस ग्रन्थमें जो मंगलाचरण हैं उसमें किसे नमस्कार किया गया है। जो कि सर्व में व्यापक है एक चैतन्य स्वरूपमय जो परमात्मा है उसको नमस्कार किया। सिद्ध परमात्मा है वह तो कार्य परमात्मा है उसको नमस्कार नहीं कर सकते। क्योंकि वह उसकी जगह है हम दूसरी जगह है जो कुछ हम कर सकते हैं अपना कर सकते है परमात्माका नहीं कर सकते हम दूसरेकी पूजा कर लेते यह सोचना विचारना भ्रममूलक है। दूसरा पदार्थ जो श्री कार्यपरमात्मा है वह अनन्तवीर्यवान् अनन्तसुखसम्पन्न है सो उससे तो भगवान् अपने लिए सुख भोग रहे न हमें कुछ देते न लेते है। हम ही अपने कर्ता हैं भोक्ता हैं कोई किसीका नहीं है कोई किसी के लिए नहीं करता है जो कुछ करता है वह अपने लिए ही करता है भगवान्का पूजन नमस्कार हम खुदके लिए करते हैं न कि भगवान्के लिए करते हैं भगवान्का हम कुछ करते यह मानना भूल है। जैसे कि लोग समझते हैं परमें हमने यह किया यह उनकी भूल है। उसने तो सिर्फ वहां भगवान्के बारेमें अपना विचार बनाया और कुछ नहीं किया इससे आगे रंच भी उसने कुछ नही किया जहां भावोंमें इतनी कोमलता विनयशीलता है वहाँ कोमल परिणाम बनाया हमने अपना विचार भाव व्यक्त किया। भगवान्का उपयोगमें आश्रय करके हम गुणविकास करें यह तो हमारी कला है। हमने भगवान्को नहीं पूजा, मात्र अपने आपको पूजा। उसे शुभ अर्थात् अच्छे भाव कहते हैं।

अपने आपमें विराजमान शुद्ध चैतन्य है उसे जाननेकी कोशिश करो जिससे आत्मकल्याण हो। जीवका स्वरूप भी चैतन्य स्वरूप है जो इस समय की अवस्थासे विलक्षणस्वरूपी है सामान्यरूप है। जो अध्रुव रहता है वह

विशेष है। यहां विविध विशेष रहते हुए भी विशेष परिणति द्वारा सामान्य-स्वरूप निज कारण परमात्माको नमस्कार किया गया। यह चैतन्य स्वरूप है उसको देखा जा रहा है, परमात्माको कोई बनाया तो जाता नहीं है। अज्ञानमें रागादि भाव आत्माके अन्दर उत्पन्न होते ही है और ज्ञान होनेपर स्वभाव विकास बढ़ता ही है। स्वभाव शक्तिरूप भावसे बाहरी रूप बाह्योपयोगरूप जो है वह स्वभावसे निकलनेका रूप है वहां परमात्मा है ही नहीं। अगर अपने आपके बारेमें यह निर्णय हो जाय कि मैं परमात्मस्वरूपवाला हूं तो परमात्म शक्तिकी प्रतीति वाला वह अपने शुद्धस्वभावका आश्रय करके शुद्धविकास कर लेगा। ये तो सब पुण्यपापके वैभव ठाठ है उन पर रीझना विडम्बना है। जो रीझे वह मूर्ख है व विपत्तिको बुलाता है। एक समयकी बात है कि एक महाशय थे उनका नाम बेवकूफ था तथा उनकी श्रीमती जी का नाम फजीहत था। उन दोनोंमें आपसमें कभी कभी बनती नहीं थी किसी तरहसे एक दिन दोनोंमें ज्यादह झगड़ा हो गया तो श्रीमती जी वहांसे चल दी। थोड़ी देर बाद उन्होंने उनकी तलाश की तो वे बेवकूफ जी जहां भी जिससे पूछे कि हमारी फजीहत देखी तो उस चीजको जो आदमी जानते थे उन्होंने कह दिया नहीं देखी। पर एक समय अनजान आदमीसे मौका पड़ा उसने कहा कि भैया हम बात समझे नहीं, आपका क्या नाम है? वह बोला मेरा नाम बेवकूफ है तो वह पथिक बोला कि बेवकूफ होकर कहां फजीहत ढूढ़ने जाते बेवकूफको तो जगह जगह फजीहत मिलती। अथवा बेवकूफो स्वयं फजीहत ही दिखाई देती है वह तो सब कर्मोंका खेल है। वह अपरिचित पुरुष अनभिज्ञ था उसे यह मालूम नहीं था कि फजीहत उसकी स्त्रीका नाम है। इसी प्रकार अपनी दुकानका कार्य होता है उसमें यदि हमें ज्यादा नफा होता है तो हम मान बैठते हैं कि आज हमें कुछ लाभ हुआ है। वह यह नहीं जानता कि अज्ञानभावमें तो यह सब विपदाका काम करती। अगर हमें दुकानमें टोटा पड़ गया तो हम उसमें अज्ञानताके कारण दुःख मान लेते है यह हमारी भूल हैं उसी प्रकार पुत्र आज्ञाकारी है तो सुख मान लेते है तथा आज्ञाकारी नहीं तो दुःखका अनुभव करते हैं। अज्ञानता जो है वह बेवकूफी, मिथ्या व असत्य है। यहां तो

सिर्फ यह है कि दुःख काल्पनिक चीज है हम कल्पनाऐ ऐसी करते हैं कि हाय वह कैसा धनी हो गया है हम उससे गरीब हैं हम क्या धनी, हैं हमसे भी ज्यादा धनी इस दुनियांमें दूसरे आदमी पड़े हुए हैं, इस लड़केको ज्ञान कब आयेगा कैसी जिन्दगी बितायेगा अनेको प्रकारकी कल्पनाएं मानस आगारमें उठती रहती हैं। अगर हमें ज्ञान हो जाय तो हम अपनी आत्मा जो चैतन्य स्वरूप वाली है उसीके गुणोंकी ओर अपनी शक्तिको लगावें। मैं तो एक सामान्य स्वरूप हूं। अगर धनमें सुख होता तो भरत चक्रवर्ती, ऋषभदेव भगवान् तथा शान्तिनाथ भगवान् ने फिर क्यों इस धनसे मोह छोड़ दिया है। मैं मनको अहितरूप नहीं मान सका और अपनी आत्माको हितरूप न मानकर पर पदार्थोंको मानता रहा हूं यही संस्कार बेचैनी कर रहा है। जिसके ज्योति नहीं वह आदमी यही सोचेगा कि भगवान् भी बेवकूफ है वह उनके गुणोंकी परख नहीं कर सकता है। वह भगवान्के स्वरूपको नहीं समझ सकता है फिर महत्त्व कैसे जाने। जिनको पूज रहे हैं उनको वैभवसे अतीत जो न माने, वह भगवान् के बारेमें यह नहीं सोच सकता कि भगवान्ने विवेकका अनुकरण किया है। इस दुनियामें कई लोगों ने भगवानको अन्यथा हो समझा हैं। कुछ विरले बुद्धिमान ही भगवान् को मानते हैं क्योंकि ज्योतिके अनुभव वालों की दृष्टिमें ही यही बात है कि उन्होंने केवल्य अवस्था को प्राप्त कर निर्विकल्प ज्ञान को प्राप्त किया है। भगवान्की पूजा भी कर लें और भगवान्को नहीं समझ पायें ऐसे भाई भी इस समय है।

भैया ! जब तक हममें गुणकी बात नहीं आती तब तक जरा भी दूसरे के तथ्य ज्ञात नहीं हो सकते जरा भी दूसरेके गुण ज्ञात नहीं हो सकते हैं। जो गुणको नहीं जानते वे किसीको क्या पहचानेंगे, नहीं पहचान सकते हैं। आप जब भगवान् की पूजा करते हैं उस समय मूर्ति चेहरा देखकर यह कहते हो कि भगवान् हंस रहा है तो तुम पहले यह सोचो कि तुम्हारे मनमें पहले कुछ प्रफुल्लता है इसीसे तुम्हारे लिए ऐसा दिखाई देता है। कभी कभी तुम्हें चेहरा रंजमें दिखता है उस समय तुम्हारा मन किसी रंजमें होगा अतः वह रंजमें दिखता है। कोई मनुष्य बहुत उदार है उसकी उदारताकी पहिचान

सिर्फ वही कर सकता है जो खुद उदार हो, नहीं तो और कोई उसकी कदर नहीं कर सकता है। इसी तरहसे जो कुछ थोड़ा भी ज्ञानी होगा वही भगवान् के महत्त्वको समझ सकता है। यहां पर जीवने सिर्फ विशेषका ही परिचय किया है सामान्यसे कुछ भी सम्पर्क नहीं रक्खा है। सामान्यके अवलोकनके विना विनाश है। उदाहरणके लिए एक उगलीकी अनेक अवस्थाएं होती हैं वही उंगली सीधी भी, वही टेढ़ी भी हो जाती है तो अब यह बताओ जो सीधी है, टेढ़ी है वह या है सब एक ही चीज है न कि अलग अलग, सिर्फ उसकी अवस्थाएं अनेक व अलग अलग हैं। यह अगुलि तो एक ही है, इसे हम आंखोंसे नही देख सकते उसे तो सिर्फ मनसे ही जान सकते हैं। इसी प्रकार सामान्य आत्मा इन्द्रिय व मनसे भी नहीं जाना जा सकता है। अगर एक सेकण्डके दशमें हिस्सेमें भी आत्माका अनुभव हो जाय तो भी काफी है। मन और इन्द्रिय अपना कार्य वन्द करदे ऐसी स्थिति अधिक देर तक नहीं रह सकती है। मनसे ज्ञानकी उत्पत्ति वा प्रारम्भ है, किन्तु आत्मानुभवके समय मनका काम नहीं है।

खिन्नीकी लकड़ी पोली होती है उस लकड़ीके दो टुकड़े कीजिये फिर उन दोनोंको इस तरहसे तिरछे जोड़ दीजिएगा कि वे एकसे दिखने लगे। फिर एक लोटा भर पानीमें डुवोकर उस लकड़ीके शिरेको मुंहके अन्दर रख कर ऊपरको सांस खींचिये तो उस लोटेका जो पानी होगा वह उस लड़कीके द्वारा ऊपर आकर टपकता रहेगा उस कार्यमें जो पहले क्रिया हुई है वह मुंह की हुई फिर वादमें पानी टपकनेकी क्रिया हुई है। इसी प्रकार आत्माकी परीक्षा विशेषके द्वारा होती है। मोहीने जो परिचय किया है वह पर पदार्थोंसे किया है उसने आत्मासे बिल्कुल परिचय नहीं किया है अतः दुःखों को भोगता रहता है। जो चिदानन्द आत्मस्वरूप आत्माका ध्यान करेगा वह एक दिन अवश्य ही उस परमात्मा को अपनी ही आत्मामें पा लेगा। हम देखते है कि यह आदमी है पर वास्तव में वह खाली आदमी नही है, मनुष्य नहीं है। यह समझना भूल है कि वह मनुष्य है क्योंकि देखने में आता है कोई न कोई अवस्था। जब हम बच्चे थे उसी समय हमें मनुष्य कहते तो फिर

जवान होनेपर भी हमें मनुष्य क्यों कहा जाता है अगर हम बच्चे ही आदमी होते तो फिर हम मिटते नहीं बच्चे ही रहना चाहिए था। इसी तरहसे जवान से बूढ़े हो गये तो हमें बूढ़ा कहने लगे फिर मनुष्य कैसे रहे ? नहीं रहे, क्योंकि वह मनुष्यपना कभी बदलना नहीं चाहिए था क्योंकि वह तो एक है, जो चीज सामान्यदृष्टि रहने पर ही ग्रहणमें आ सकी है। इसी तरहसे स्थूलरूपमें मनुष्य का दृष्टान्त है। जीव असलमें क्या है मनुष्य है तो फिर वह आगे जीव नहीं हो सकता है। देव, नारकी, पशु, तिर्यञ्च, भवोंमें रहने वाले जीव सामान्य अनादिसे अनन्त काल तक एकसे रहते चले आये हैं और रहेंगे फिर उन अवस्थाओंको ही जीव कहना भ्रम है। पर इतना होने पर भी अवस्था प्रत्येक समयमें ही बदलती रहती है। व्यवहारमें पशु, नारकी, मनुष्य आदि को जीव कहना, क्योंकि ये जीवकी दशामें रहते हैं। इस तरहकी विशेषोंमें दृष्टि हो तो प्रत्येकके मनमें आकुलता रहती है। अतः यह कहना युक्त है कि उस चिदानन्द को पाये बिना विशेष विषमोंका भार ढोना पड़ेगा। भैया, इस विडम्बना से बचनेके लिए हमें उसके गुणोंको देखकर चलना चाहिए कि उसमें क्या ऐसा कार्य किया जाता है जिससे वह यहाँ से मुक्त हो सकता है। हम करते क्या हैं कि बाहरी मायामें फंस कर जन्म मरणके दुःखोंका ही अनुसरण करते हुए कर्मोंको दोष देते रहते हैं वास्तवमें अपनी भूलकी ओर ध्यान नहीं देते कि आखिर यह भूल मेरी है जो अपनी आत्मामें ध्यान नहीं लगाता हूँ।

इस संसारमें मैं शान्ति चाहता हूँ तो ऐसा सोचे कि शान्ति किसे दिलाई जाय कैसे दिलाई जाय इन बातोंको जाननेके बाद ही उसे शान्ति मिलेगी। शान्ति पानेके लिए हमें सबसे पहले यह जान लेना पड़ेगा कि मैं और गैर ये क्या चीज है इसी को जानने के लिए मैं कोशिश नहीं करता हूँ। जब मैं कौन हूँ ऐसा सत्य जान जाऊंगा तो अवश्य ही शान्ति पा लूंगा तथा आत्मा और अनात्मा क्या है साथ साथ यह भी जानना पड़ेगा। मैं और गैरमें मैं इनमें कौन मैं हूँ इन दोनोंमें से यही संकल्प विकल्प मनमें उठते रहते हैं। मैं तो केवल एक है पर गैर मैं अनेकों हैं। स्वको देखनेसे यह मालूम पड़ेगा कि जीवका स्वरूप क्या है यह जीव अपने आपमें विराजमान शुद्ध चैतन्य ही मैं है। जीवका

स्वरूप चैतन्य है जो हर अवस्थामें रहता है हर अवस्थामें जो सामान्य है। जो दिखने वाले ये पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश और काल है ये मैं नहीं हूं। ये तो सिर्फ गैरमें ही है। ये प्रत्येक परमाणु है एक एक द्रव्य है ये सब द्रव्य परमाणु अपने नहीं है तो फिर ये द्रव्य मेरे कहां से हो सकते हैं ये तो केवल परिवर्तन ही हैं। आत्मा व अनात्मामें है अनात्मा कितनी है यह जाननेके लिए समस्त जीवों को कैसे हैं यह जानना ही पड़ेगा जो मैं अपने बारेमें जानता हूं वैसे ही सब जीवोंके बारेमें जानना पड़ेगा। तब ही सब जीवों का निर्णय हो सकेगा। माया मूर्तिपर दृष्टि रख कर कैसे अपना निर्णय हो सकता है। वह एक चीज नहीं, है इन सब स्कन्धोंके हिस्से हैं। एक धर्मद्रव्य सारे लोक में फैला है और एक आकाश द्रव्य लोकाकाशके बाहर भी फैला है तथा एक अधर्मद्रव्य सारे संसारमें फैला है। एक एक काल द्रव्य एक एक प्रदेशमें ठहरा हुआ है।

जब ये एकक्षेत्रस्थ पुद्गल द्रव्य भी हमारे नही है तो फिर अन्य कैसे हो सकते हैं? ये रागादि भाव तो हमारे विपरिणमन है वह भी मेरी चीज नहीं है। असख्यात प्रदेशोंमें एक एक जीव द्रव्य स्थित है उसमें रागादिक है पर औपाधिक है। मैं और गैर मैं को जानने पर ही यह मालूम पड़ेगा कि मैं एक चैतन्य आत्मा हूं। इस तरहसे मैं जो हूं गैर पदार्थोंसे अलग हूं, निर्विकल्प स्वरूप, ध्रुव निरपेक्ष हूं तो फिर पारिणामिक ध्रुवमें क्या हूं? इस पर विचार करें तो भेद दृष्टिसे तो दर्शन, ज्ञान, चारित्र की सत्ताका महत्त्व उनकी क्रिया ही अलग नजर आवेगी इनकी शीलता परिणमन करनेकी है ये परिणमन अपने नहीं है इसी प्रकार से जो ज्ञान व्यक्ति है आठ प्रकार की वह भी हमारी नही है मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययःज्ञान, केवलज्ञान तथा कुमति, कुश्रुत, कुवधि ये आठ ज्ञान ही जब अपने स्वरूप नहीं हैं तो दूसरे क्या हो सकते ये तो सिर्फ ज्ञानके परिणमन रूप है। हां केवलज्ञान केवल ही है इससे सिर्फ आनन्द ही आनन्द हो सकता है। एक समयके केवलज्ञानसे दूसरे समयका केवलज्ञान का विषय पहले का नहीं हो सकता है इसकी इतनी शुद्धि है कि वह सब सदृश है। लोकमे कोई भी जीव ऐसा नहीं है जो किसी भी दशा में परिणमनशील न हो अर्थात् सब जीव परिणमनशील हैं। चक्षुदंर्शन,

अचक्षुदर्शन अवधिदर्शन, केवलदर्शन, इनका जीवसे शाश्वत सम्बन्ध नहीं है। जीवमें अनेकों परिणमन परिभ्रमण करते हैं इन परिणामोंसे कोई परिणमन चारित्र दर्शनका है जब ये भी हमारे नहीं है तो फिर दूसरी चीज मेरी कैसे हो सकती है। जो २६ प्रकार की कषाये मार्गणा हैं अनन्तानुबन्धी, क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यान संज्वलन हास्य रति अरति शोक, भय जुगुप्सा स्त्री वेद पुरुष नपुंसकवेद और अकषाय ये हीं हमारे नहीं है तो फिर दूसरे आदमी परपदार्थ मेरे कैसे हो सकते है ये कषाय तो परिणमन रूप है। तुम्हें मालूम हो कि श्रद्धाके परिणाम औपशमिक, क्षायिकभाव, मिश्रभाव ये भी हमारे स्वरूप नहीं सिर्फ परिणमन रूप हैं तो फिर परपदार्थ मेरे कैसे हो सकते हैं।

भैया ! कषाय रहित मेरा स्वभाव है वह एक निश्चल स्वतंत्र चीज है किन्तु, इतना होने पर भी प्रति समयमें अकषायका परिणमन चल ही रहा है। उसकी परिणतिमें अनवरत ये अकषाय चलता है वह सब परिणमन है मैं तो ध्रुव तत्त्व हूं। जिससे ये आठ ज्ञानके भेद उपजते हैं यह हमारा स्वरूप है। जिसका चक्षुदर्शन आदि परिणमन होता रहता है यह पारिणामिक भाव है ज्ञानशक्ति दर्शनशक्ति, चारित्र शक्ति आदि। उसे ही मैं अथवा मेरा है यह मानना तथा फिर सोचे क्या मैं बिखरा हुआ जीव हूं जो मेरेमें अलग अलग प्रकार हैं ज्ञान अलग, दर्शन अलग, चारित्र अलग होता है और प्रत्येककी शक्ति मेरेमें आकर के मिल जाती है ? नहीं, वह समस्त ही एक अभेद आत्मा है। समस्त शक्तिके अभेदरूप जिसको कह सकने वाले कोई वचन नहीं है वह एक स्वभाव है वह मैं हूं। अपनेको देखो तब मालूम पड़ेगा तुम्हारा स्वरूप क्या है ? जैसे तुम्हारा बच्चा है वह आपकी कल्पित कुटियामें है, किन्तु है तो भिन्न जीव तुम उसे अपना मान बैठे हो पर यह भ्रम है। वह तुम्हारी कुटियामें रहता है इस लिए क्या तुम्हारा है ? उसी प्रकारका दूसरा जीव भी समक्ष है जरा तुमसे थोड़ी दूर रहता है उसे अपना क्यों नहीं मानते हो। अगर ये परपदार्थ अपने होते तो अपनेसे तन्मय होते हमारे ये पूज्यपाद राम हनुमान, भरत चक्रवर्ती सरिखे महाराजाओं ने अपनी लात मार दी सारे राज्यपाट पर तो फिर हम क्यों इससे लिपटे फिरते हैं अगर ये हमारे होते और हमारी भलाईके लिए

होते तो फिर इतने बड़े महाराजा इतने बड़े पुरुष राजपाटको क्यों छोड़ देते ? उन्होंने तो अपनी तीन खण्डकी विभूति तक को छोड़कर इस चिदानन्द आत्मा का ध्यान किया है। उन्होंने इसे त्यागनेमें बिल्कुल हिचकिचाहट नहीं की है जड़ पदार्थ मेरा कुछ नहीं है हमें अपनी जड़को मजबूत बनानेके लिए सम्यक्त्व का आचरण करना चाहिए; नहीं तो यह जिन्दगी वैसे ही बीत जावेगी कुछ भी अपना भला नहीं हो सकेगा। अगर हम ऐसा न करें तो भगवान्के सपूत कैसे कहे जा सकते हैं जब तक हम सम्यक्त्वको धारण न करेंगे तो हमारा सम्यक्त्व व ज्ञान नहीं जगेगा जिससे हमारा आत्मकल्याण होने वाला है। उस सम्यक्त्वको धारण करने पर ही हम भगवान्के सपूत कहे जा सकते हैं।

यहां पर एक मर्मको कहानीके रूपमें उदाहरणार्थ सुनें एक आदमी अपने गांवसे चला। चलते चलते उसे रास्तेमें अंधेरा हो गया। वह दूसरे गांव पहुंचनेकी तलाशमें था, पर अन्धेरा इतना तेज था कि वह दूसरे गाँवकी जहां उसे जाना था रस्ता भूल गया, वह पगदंडी का रास्ता था, वह एक घन्टे तक चला फिर उसने सोचा कि अगर मैं ऐसे चलते ही रहूँगा तो पहुंच नहीं सकता न मालूम कब तक चलना पड़े कब वहां पहुंचू रास्ता मालूम नहीं पड़ती वह एक टीले पर जाकर एक स्थान पर जाकर बैठ गया। उस समय वह बैठा तो था पर उसके दिलमें वही घबड़ाहट थी कि वह कब अपने ठीक स्थान पर पहुंचेगा तथा वह अपनी रास्ता कहां ढूंढ पावेगा इसी चिन्तामें मग्न था कि एकाएक एक बिजली चमकी और उसे वह सड़क व एक पगदंडी दिख गई जिस पर होकर उसे जाना था वह बड़ा ही खुश हुआ और वह फिर आनन्दपूर्वक वहीं पर सोया अब उसे उस प्रकारकी कल्पना नहीं थी कि वह कब पहुँचेगा कैसे पहुंचेगा। उसकी आत्मामें शान्ति थी। वह सो गया, चैनसे सोया रात भर फिर सुबह उठकर वह चल दिया और ठीक स्थान पर जाकर वह पहुँच गया। इसी तरहसे यह जीव भी अज्ञानरूपी अंधेरीमें एक पगदंडी पर भटकता हुआ फिर रहा था सोच रहा है कि क्या करूं कहां पर जाऊं किस प्रकारसे जाऊं पर उसी समय एक ज्ञानरूपी बिजली चमकी उसमें उसे अपना रस्ता दिखाई दे गया है। फिर वह उस मुसाफिरकी भांति चला नहीं, वह क्या सोचता

है कि यह रस्ता तो अपने पास ही है जब चाहे चल लूंगा इसे कोई छीनने वाला नहीं है। वह ज्ञान होते ही संयमासयमकी पगदंडी से चलकर संयमकी सड़कसे चलकर मोक्षके समीप पहुंचना। अहो ऐसी शक्ति पाकर भी कोई मोह जालमें फंसा हुआ सोचता है अभी संसारिक सुखोंको भोगना पड़ रहा है, दुःखों को भोगना पड़ रहा है किन्तु निकटमें कभी पासकी चीजका उपयोग करेगा चीज पास है तो जब मनमें आयेगा तब उपयोग कर लेगा।

यह संसारी जीव मोह रागद्वेष अज्ञान ममत्वमें में पड़कर ही जीवनको व्यर्थ गमा रहा है। सबसे बड़ा दुःख है मानसिक दुःख। जबतक यह दुःख नहीं मिटेगा तबतक किसी भी प्राणीको शान्ति नहीं मिल सकती है। भैया शान्ति पानेके लिए ममत्वबुद्धिको दूर करना पड़ेगा तभी हमारा कल्याण होगा। जिस रास्तेसे हमारे साधुगण चले आये हैं उस ही रास्ते पर हमें भी चलना चाहिए जिससे आत्मकल्याण हो। जिससे ये जो संकट आते हैं वे नहीं आवें। विवेकी पुरुष विषयोंसे विराम लेता है जब भी किसी उपदेशके द्वारा एक बिजली चमकी और उसने बताया कि तुम्हारा रस्ता वह है पर तुमने उसे उपयोगमें नहीं लिया है यह सब बाहरी पदार्थ क्षणिक है जब समय ही क्षणिक होता है तो फिर परपदार्थोंकी तो बात ही क्या कहना है। समझते ही संतोष हो जाता है। मिथ्यादृष्टिके अगर सम्यक्त्व व संयम हो जावे एक साथ तो उसके अप्रमत्तविरत गुणस्थान हो जाता है।

जहाँ पर श्रद्धा व चारित्र गुणका कुछ भी शुद्ध विकास नहीं है उल्टा ही परिणमन है ऐसे परिणामको मिथ्यात्व कहते हैं मिथ्यात्वमें जीव शरीरको स्वयं मानता है राग द्वेषादिक विभावोंसे भिन्न शुद्ध ज्ञायक स्वभावका परिचय नहीं कर पाता। जिस जीवके श्रद्धा निर्मल हो गई थी वही जीव जब अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, आदि उत्पन्न नहीं है और रागके क्लेश को नहीं सहन कर सकता है तो। अविरत गुणस्थान होता है, कोई भी व्रत नहीं हो सकता है हां असंयमका क्लेश है। वह सोचता है कि मैं भूला हूँ पर मार्ग वह है उस सड़क पर पहुंचानेके लिए गुणाश्रय ही हमारी मदद करेगा दूसरा कोई भी नहीं कर सकता है। हम उस मार्ग पर चलते हैं पर उसपर एक दम

नहीं चल सकते धीरे धीरे ही चल सकेंगे। धीरे धीरे भी सही चलनेसे महाव्रत पर पहुंच जावेंगे। हम इस समय विषय कषायोंके क्रूर घोर जगलमें पड़े हुए हुए हैं और उसी घोर जगलमें भटक रहे हैं आगे जाने को रास्ता है पर उसे पकड़ते नहीं हैं वहींके वहां पर चक्कर खा रहे हैं। जब हम उस रास्ते को पकड़ लेंगे तभी इस जंगलसे निकल कर मगलमें पहुंचेगें। वह है रास्ता संयमासंयम, इससे चलकर संयममें आवें फिर ध्यानमें आवें इससे अपूर्व करण की प्राप्ति होती है इस मार्गसे अपूर्वकरण मार्गपर आकर जिसमें समानता है उस अनिवृत्तिकरणमें आते है फिर वह कषायोंकी प्रतिध्वनि करके एकदम क्षीण अवस्थामें आ जाता है। यही उसका प्रताप है जो एक बार उजेलेमें देख लिया था क्षीण मोह बनने की देर थी। उसी अवस्था के बाद अनन्त दर्शनकी प्राप्ति होती है। यह विकास विशेष अवस्थाकी दृष्टिसे नहीं होता। वहां तो सामान्यके परिचयकी जरूरत है। सयोगकेवली हुए। फिर आखिर यह शरीर कब तक चिपका रहेगा। इन कारणोंके खतम होने पर एक कारण योग जो कुछ थोड़ी देर तक रहता ही है इसका अभाव होते ही सदाको शरीर दूर हो जावेगा। गृहस्थ अवस्थामें अपनी जड़ ही पक्की बनती है। पुत्र मित्र बन्धु कोई भी साथ जाने वाले नहीं हैं।

सामान्यमें स्वभावदृष्टिसे व विशेषमें पर्यायदृष्टिसे दिखने वाला द्रव्य है। सामान्यकी दृष्टि द्रव्यार्थिकसे व विशेषकी दृष्टि पर्यायिकसे होती है। जब जीव द्रव्यदृष्टिसे देखा जाता है तो द्रव्यसामान्य ही में आता है। पर्यायोंमें रहनेवाला एकद्रव्य ही है जिसमें ये पर्यायें हैं। जब द्रव्यदृष्टिसे देखते हैं तो स्वाभाव दिखता है।

नोट—इस गाथाका प्रवचन तथा आगेके प्रवचन आगराके प्रेसों से संस्थाने मुद्रित करा लिया था। इतना छपनेके बाद कम्पोजीटरों को ज्ञात होनेसे अवस्थगित करके यह पंचम भाग पूरा कर दिया है। आगे षष्ठ भागमें देखिये।

•••○○○•••

मुद्रक—मैनेजर, शास्त्रमाला प्रिंटिंग प्रेस, रणजीतपुरी, सदर मेरठ।